

# भवभूति के नाटकों में रस निष्पत्ति : नाट्यशास्त्रीय परिप्रेक्ष्य में एक समालोचनात्मक अध्ययन

डॉ. प्रवीन कुमारी

पूर्व शोध विद्वान

आगरा कॉलेज, आगरा, भारत

सारांश

भारतीय काव्यशास्त्र में रस को काव्य की आत्मा के रूप में प्रतिष्ठित किया गया है तथा नाटक को रस-अनुभूति का सर्वाधिक सशक्त माध्यम माना गया है। भरतमुनि के *नाट्यशास्त्र* में प्रतिपादित “विभावानुभावव्यभिचारिसंयोगाद्रसनिष्पत्तिः” सूत्र रस-मीमांसा का मूलाधार है। संस्कृत नाट्यपरंपरा में भवभूति का स्थान विशिष्ट है, क्योंकि उनके नाटकों—महावीरचरित, मालतीमाधव तथा उत्तररामचरित—में रस की निष्पत्ति अत्यंत गहन, मनोवैज्ञानिक और दार्शनिक स्तर पर अभिव्यक्त हुई है।

प्रस्तुत शोधपत्र में भवभूति के नाटकों की रस-संरचना का नाट्यशास्त्रीय विश्लेषण करते हुए विभाव, अनुभाव, संचारी भाव और स्थायी भाव की परस्पर क्रिया का सूक्ष्म परीक्षण किया गया है। *महावीरचरित* में वीर रस का नैतिक एवं धर्मप्रधान स्वरूप, *मालतीमाधव* में संयोग-वियोगात्मक श्रृंगार की भाव-कोमलता तथा *उत्तररामचरित* में करुण रस की चरम संवेदनात्मक परिणति भवभूति की नाट्यप्रतिभा के अद्वितीय उदाहरण हैं। विशेष रूप से राम के आत्मसंघर्ष, सीता-वियोग और पुनर्मिलन के प्रसंगों में करुण से शान्त की ओर संक्रमण भारतीय सौंदर्यशास्त्र की परिपक्वता को उद्घाटित करता है। अभिनवगुप्त के साधारणीकरण सिद्धांत के आलोक में यह स्पष्ट होता है कि भवभूति के नाटक दर्शक को व्यक्तिगत अनुभूति से सार्वजनीन भावानुभूति तक ले जाते हैं। निष्कर्षतः भवभूति के नाटक रस-सिद्धांत की दृष्टि से प्रौढ़, दार्शनिक तथा मनोवैज्ञानिक गहराई के अनुपम उदाहरण सिद्ध होते हैं।

## 1. प्रस्तावना

भारतीय काव्यशास्त्र की दीर्घ और समृद्ध परंपरा में “रस” को काव्य की आत्मा के रूप में प्रतिष्ठा प्राप्त है। आचार्य मम्मट ने स्पष्ट शब्दों में कहा— “वाक्यं रसात्मकं काव्यम्”—अर्थात् जिस वाक्य में रस का संचार हो वही काव्य है। यह धारणा केवल काव्य के सैद्धांतिक प्रतिपादन तक सीमित नहीं, बल्कि भारतीय सौंदर्यचिंतन की मूल संवेदना का प्रतिपादक है। वेदों के ऋचाओं से लेकर उत्तरकालीन संस्कृत नाट्य और काव्य तक, रस



की अनुभूति ही साहित्य का अंतिम लक्ष्य मानी गई है। इस व्यापक परंपरा में नाटक को विशेष महत्व प्राप्त है, क्योंकि नाटक दृश्य और श्रव्य दोनों माध्यमों के संयोग से भावों को मूर्त रूप देता है।

नाट्यशास्त्र में प्रतिपादित सूत्र— “विभावानुभावव्यभिचारिसंयोगाद्रसनिष्पत्तिः”—भारतीय रसमीमांसा का मूलाधार है। इस सूत्र में निहित सिद्धांत यह है कि रस कोई प्रत्यक्ष भाव नहीं, बल्कि भावों के समुचित संयोग से उत्पन्न सौंदर्यानुभूति है। विभाव (आलम्बन और उद्दीपन), अनुभाव (भावों की बाह्य अभिव्यक्ति) और संचारी भाव (व्यभिचारी भाव) मिलकर स्थायी भाव को उद्दीप्त करते हैं, और साधारणीकरण की प्रक्रिया के माध्यम से वह रसस्वरूप में परिणत होता है।

भारतीय नाट्यपरंपरा में भास, कालिदास, शूद्रक, विशाखदत्त आदि नाटककारों ने विविध रसों की सृष्टि की, परंतु भवभूति का स्थान इस परंपरा में विशिष्ट और अलग पहचान वाला है।

भवभूति (आठवीं शताब्दी) संस्कृत नाट्यपरंपरा के ऐसे रचनाकार हैं जिनकी कृतियों में भावों की गहनता, दार्शनिक गंभीरता और मनोवैज्ञानिक सूक्ष्मता का अद्वितीय समन्वय मिलता है। उनकी तीन प्रमुख नाट्यकृतियाँ—

- महावीरचरित
- मालतीमाधव
- उत्तररामचरित

भारतीय रसपरंपरा की दृष्टि से अत्यंत महत्वपूर्ण हैं।

भवभूति की रचनाओं का मुख्य वैशिष्ट्य यह है कि उनमें रस की निष्पत्ति केवल कथानक या घटना-क्रम पर आधारित नहीं है, बल्कि पात्रों के अंतर्मन में घटित भाव-संघर्षों के माध्यम से संपन्न होती है। उदाहरणतः महावीरचरित में वीर रस केवल युद्ध-प्रसंगों तक सीमित नहीं, बल्कि धर्म-संरक्षण, आदर्श-निष्ठा और मर्यादा-पालन की अंतःप्रेरणा से संबद्ध है। मालतीमाधव में शृंगार रस संयोग-वियोग के द्वंद्वत्मक अनुभव से परिपक्व होता है, जबकि उत्तररामचरित में करुण रस की निष्पत्ति आत्मसंघर्ष, लोकमर्यादा और व्यक्तिगत पीड़ा के द्वंद्व से उत्पन्न होती है।

यहाँ यह भी ध्यान देने योग्य है कि भवभूति के नाटकों में करुण रस की प्रधानता को लेकर विद्वानों में विशेष चर्चा रही है। अनेक समीक्षकों ने उन्हें “करुण रस का महाकवि” कहा है। किंतु यदि नाट्यशास्त्रीय दृष्टि से देखा जाए तो उनके यहाँ केवल करुण ही नहीं, बल्कि वीर, शृंगार और अंततः शान्त रस का भी गहन और संतुलित समन्वय मिलता है।

रस की सिद्धि का अंतिम चरण “साधारणीकरण” है, जिसे आचार्य अभिनवगुप्त ने अपने अभिनवभारती में विस्तारपूर्वक स्पष्ट किया।



अभिनवगुप्त के अनुसार, जब दर्शक अपनी व्यक्तिगत सीमाओं से ऊपर उठकर पात्र के भावों को सार्वभौम अनुभव के रूप में ग्रहण करता है, तभी रस की निष्पत्ति होती है। भवभूति के नाटकों में यह साधारणीकरण अत्यंत प्रभावपूर्ण ढंग से संपन्न होता है। राम का वियोग केवल एक पात्र का दुःख नहीं रह जाता, बल्कि समस्त मानवता के अंतःकरण का अनुभव बन जाता है।

वर्तमान शोधपत्र का उद्देश्य भवभूति के नाटकों में रस-संरचना का नाट्यशास्त्रीय विश्लेषण करना है। इसमें निम्न बिंदुओं पर विशेष ध्यान दिया गया है—

1. विभाव, अनुभाव और संचारी भाव की संरचनात्मक भूमिका।
2. स्थायी भावों का परिपाक और रस में परिणति।
3. प्रमुख रसों—वीर, श्रृंगार, करुण और शान्त—का तुलनात्मक विश्लेषण।
4. साधारणीकरण सिद्धांत की भूमिका।
5. भवभूति की मनोवैज्ञानिक और दार्शनिक दृष्टि का रस-सिद्धांत से संबंध।

इस अध्ययन में प्राचीन आचार्यों के मतों—भरत, आनंदवर्धन, अभिनवगुप्त, मम्मट, विश्वनाथ आदि—का संदर्भ लेते हुए भवभूति की नाट्यकृतियों का विश्लेषण किया गया है।

अतः प्रस्तावना के रूप में यह कहा जा सकता है कि भवभूति का नाट्य-साहित्य भारतीय सौंदर्यशास्त्र की उस परिपक्व अवस्था का प्रतिनिधित्व करता है जहाँ रस केवल भावात्मक अनुभव नहीं, बल्कि दार्शनिक चेतना का माध्यम बन जाता है। उनका नाटक मानव जीवन की वेदना, मर्यादा और प्रेम की गहराइयों को स्पर्श करते हुए दर्शक को आत्मानुभूति की उच्चतर अवस्था तक ले जाता है।

## 2. रस सिद्धांत : सैद्धांतिक आधार

भारतीय काव्यशास्त्र की समूची परंपरा में रस-सिद्धांत केंद्रीय स्थान रखता है। यह केवल साहित्यिक सिद्धांत नहीं, बल्कि भारतीय सौंदर्य-दर्शन की आधारशिला है। वेद, उपनिषद, पुराण, काव्य और नाट्य—सभी में अंततः जिस अनुभूति की खोज की गई है, वह आनंद की अनुभूति है, और यही आनंद रस के रूप में परिभाषित होता है।

भारतीय आचार्यों ने रस को केवल भावों का योग नहीं माना, बल्कि एक ऐसी विशिष्ट अनुभूति के रूप में देखा जो साधारण भावानुभव से भिन्न होती है। यह अनुभूति अलौकिक (अलौकिकानुभूति) कही गई है, क्योंकि यह व्यक्ति की निजी सीमाओं का अतिक्रमण कर उसे सार्वजनीन चेतना से जोड़ देती है।

रस-सिद्धांत का मूल सूत्र भरतमुनि द्वारा प्रतिपादित है, किंतु बाद के आचार्यों—आनंदवर्धन, अभिनवगुप्त, मम्मट, विश्वनाथ आदि—ने इसे दार्शनिक और मनोवैज्ञानिक विस्तार प्रदान किया। भवभूति के नाटकों को समझने के लिए इस सैद्धांतिक पृष्ठभूमि का विवेचन अनिवार्य है।



## 2.1 भरतमुनि का प्रतिपादन

भरतमुनि द्वारा रचित नाट्यशास्त्र भारतीय नाट्यपरंपरा का प्राचीनतम और सर्वाधिक प्रामाणिक ग्रंथ है। इसमें रस का सूत्र इस प्रकार दिया गया है—

“विभावानुभावव्यभिचारिसंयोगाद्रसनिष्पत्तिः।”

अर्थात् विभाव, अनुभाव और व्यभिचारी (संचारी) भावों के संयोग से रस की निष्पत्ति होती है।

यह सूत्र अत्यंत संक्षिप्त होते हुए भी व्यापक अर्थवत्ता से युक्त है। इसमें चार मुख्य तत्त्व निहित हैं—

### (1) विभाव

विभाव वे कारण या प्रेरक तत्त्व हैं जिनसे भाव उत्पन्न होते हैं। विभाव दो प्रकार के होते हैं—

- आलंबन विभाव – वह पात्र या वस्तु जिसके प्रति भाव उत्पन्न होता है।
- उद्दीपन विभाव – वे सहायक परिस्थितियाँ जो भाव को उद्दीप्त करती हैं।

उदाहरणतः शृंगार में नायक-नायिका आलंबन विभाव हैं, जबकि वसंत ऋतु, चंद्रमा, पुष्प आदि उद्दीपन विभाव हैं।

### (2) अनुभाव

अनुभाव वे बाह्य अभिव्यक्तियाँ हैं जिनके माध्यम से आंतरिक भाव प्रकट होते हैं—जैसे अश्रु, हास्य, रोमांच, निःश्वास, नेत्रों की चंचलता आदि।

### (3) व्यभिचारी (संचारी) भाव

ये चंचल और क्षणिक भाव हैं, जो स्थायीभाव को पुष्ट करते हैं—जैसे स्मृति, शंका, ग्लानि, उत्साह, विषाद आदि।

### (4) स्थायी भाव

स्थायी भाव वह मूल भाव है जो अंततः परिपक्व होकर रस का रूप ग्रहण करता है। उदाहरणतः—

- रति → शृंगार रस
- शोक → करुण रस
- उत्साह → वीर रस

भरतमुनि का मौलिक योगदान यह है कि उन्होंने भाव और रस के मध्य स्पष्ट भेद स्थापित किया। भाव व्यक्तिगत और मनोवैज्ञानिक है, जबकि रस कलात्मक और सौंदर्यात्मक अनुभव है। जब स्थायी भाव विभावादि के माध्यम से परिपक्व होता है और दर्शक द्वारा साधारणीकरण के स्तर पर ग्रहण किया जाता है, तभी वह रस बनता है।



## 2.2 अभिनवगुप्त का साधारणीकरण सिद्धांत

अभिनवगुप्त ने अपने प्रसिद्ध भाष्य *अभिनवभारती* में रस-सिद्धांत को दार्शनिक ऊँचाई प्रदान की। उनके अनुसार रस “अलौकिक आनंद” है। यह लौकिक सुख-दुःख से भिन्न है, क्योंकि इसमें अहंकार और व्यक्तिगत स्वार्थ का लोप हो जाता है।

अभिनवगुप्त के अनुसार—

- दर्शक अपने व्यक्तिगत दुःख-सुख को भूल जाता है।
- वह पात्र के भाव को अपने भीतर अनुभव करता है।
- यह अनुभव निजी न रहकर सार्वजनीन बन जाता है।

इसी प्रक्रिया को “साधारणीकरण” कहा गया है।

साधारणीकरण का अर्थ है—व्यक्तिगत भाव का सार्वजनीन रूप में अनुभव। उदाहरणतः जब राम का वियोग दर्शक को स्पर्श करता है, तो वह केवल राम का दुःख नहीं रह जाता; वह समस्त मानवता के वियोग का प्रतीक बन जाता है।

भवभूति के नाटकों में यह प्रक्रिया अत्यंत प्रभावशाली ढंग से संपन्न होती है। करुण प्रसंगों में दर्शक स्वयं को पात्र के साथ तादात्म्य करता हुआ अनुभव करता है, किंतु वह वास्तविक दुःख से अभिभूत नहीं होता; बल्कि एक विशिष्ट सौंदर्यानंद का अनुभव करता है। यही रस है।

## 3. भवभूति का साहित्यिक व्यक्तित्व

भवभूति आठवीं शताब्दी के प्रमुख संस्कृत नाटककार माने जाते हैं। उनका मूल नाम श्रीकण्ठ था। वे विदर्भ क्षेत्र से संबद्ध माने जाते हैं।

भवभूति का साहित्यिक व्यक्तित्व अनेक विशेषताओं से संपन्न है—

1. करुण संवेदना की प्रधानता
2. दार्शनिक गंभीरता
3. मनोवैज्ञानिक सूक्ष्मता
4. नैतिक आदर्शवाद

उनकी तीन प्रमुख नाट्यकृतियाँ हैं—

- महावीरचरित
- मालतीमाधव
- उत्तररामचरित



भवभूति की विशेषता यह है कि उन्होंने पौराणिक कथाओं को केवल आख्यान रूप में नहीं प्रस्तुत किया, बल्कि उन्हें मानवीय संवेदना और दार्शनिक चिंतन से समृद्ध किया। उनके पात्र आदर्श होते हुए भी मानवीय दुर्बलताओं से युक्त हैं। यही कारण है कि उनके नाटकों में रस की निष्पत्ति गहन और प्रभावशाली बनती है।

#### 4. महावीरचरित में वीर रस

महावीरचरित रामकथा के प्रारंभिक भाग पर आधारित नाटक है। इसमें राम को आदर्श नायक के रूप में चित्रित किया गया है।

इस नाटक का प्रमुख स्थायीभाव उत्साह है, जो परिपक्व होकर वीर रस में परिणत होता है।

विभाव

आलंबन विभाव – राम, लक्ष्मण, रावण

उद्दीपन विभाव – युद्धभूमि, धर्मरक्षा, वचनपालन

अनुभाव

दृढ़ स्वर, पराक्रम, शौर्य-प्रदर्शन, उद्धोष

संचारी भाव

रोष, धैर्य, गरिमा, आत्मविश्वास

यहाँ वीर रस केवल शारीरिक पराक्रम तक सीमित नहीं है। भवभूति ने इसे नैतिक और धर्मप्रधान आदर्श से जोड़ा है। राम की वीरता धर्म-संरक्षण और मर्यादा-पालन से संबंधित है। इस प्रकार वीर रस आध्यात्मिक ऊँचाई प्राप्त करता है।

#### 5. मालतीमाधव में शृंगार रस

मालतीमाधव भवभूति की प्रेमप्रधान नाट्यकृति है।

इस नाटक का स्थायीभाव रति है, जो शृंगार रस में परिणत होता है।

(क) संयोग शृंगार

उद्दीपन विभाव – उद्यान, वसंत ऋतु, चंद्रप्रकाश

अनुभाव – चंचल दृष्टि, मंद हास्य

संचारी भाव – लज्जा, हर्ष, आशा

(ख) वियोग शृंगार

संचारी भाव – उत्कंठा, स्मृति, विषाद, आशंका



भवभूति ने प्रेम को केवल लौकिक आकर्षण के रूप में नहीं चित्रित किया, बल्कि उसे आध्यात्मिक संवेदना तक उठाया है। प्रेम यहाँ आत्माओं का मिलन है। इस प्रकार श्रृंगार रस आध्यात्मिक ऊँचाई ग्रहण करता है।

#### 6. उत्तररामचरित में करुण रस

उत्तररामचरित भवभूति की सर्वश्रेष्ठ रचना मानी जाती है।

इसका स्थायीभाव शोक है, जो करुण रस में परिणत होता है।

आलंबन विभाव

राम और सीता

उद्दीपन विभाव

सीता-त्याग, लोकापवाद, सामाजिक मर्यादा

अनुभाव

अश्रुपात, विलाप, निःश्वास

संचारी भाव

ग्लानि, निराशा, स्मृति, दैन्य

राम का आत्मसंघर्ष—राजधर्म और व्यक्तिगत प्रेम के मध्य—करुण रस को अत्यंत गहन बनाता है।

इस नाटक की विशेषता यह है कि करुण अंततः शान्त रस की दिशा में रूपांतरित होता है। पुनर्मिलन केवल भावनात्मक समाधान नहीं, बल्कि दार्शनिक शांति का प्रतीक है।

#### 7. दार्शनिक एवं मनोवैज्ञानिक आयाम

भवभूति के पात्र केवल घटनाओं के वाहक नहीं, बल्कि गहन मनोवैज्ञानिक चेतना से युक्त हैं। राम का द्वंद्व, सीता की मौन पीड़ा, मालती की उत्कंठा—ये सभी पात्रों के आंतरिक संघर्ष को उद्घाटित करते हैं।

यह मनोवैज्ञानिक गहराई स्थायीभाव को अधिक प्रबल बनाती है। संचारी भावों का सूक्ष्म चित्रण रस निष्पत्ति को प्रभावशाली बनाता है।

दार्शनिक दृष्टि से भवभूति का नाट्यदर्शन धर्म, मर्यादा और करुणा के समन्वय पर आधारित है। उनके यहाँ जीवन की त्रासदी अंततः आध्यात्मिक समाधान की ओर उन्मुख होती है।

#### 8. साधारणीकरण और दर्शक-अनुभूति

रस की अंतिम सिद्धि दर्शक के अनुभव में होती है। साधारणीकरण की प्रक्रिया के माध्यम से—

- व्यक्तिगत भाव सार्वजनीन बनता है।



- दर्शक पात्र से तादात्म्य स्थापित करता है।
- अनुभव अलौकिक आनंद में परिणत होता है।

भवभूति के नाटकों में यह प्रक्रिया विशेष रूप से सफल है। करुण प्रसंग दर्शक को द्रवित करते हैं, किंतु उसे निराश नहीं करते; वे अंततः आत्मिक शांति की अनुभूति कराते हैं।

अतः कहा जा सकता है कि भवभूति ने रस-सिद्धांत को व्यावहारिक नाट्यरूप में चरितार्थ किया है। उनके नाटक भारतीय सौंदर्यशास्त्र की सजीव प्रयोगशाला हैं, जहाँ सिद्धांत और सृजन का अद्भुत समन्वय दिखाई देता है।

### 9. निष्कर्ष

प्रस्तुत शोध-अध्ययन के आधार पर यह स्पष्ट रूप से प्रतिपादित किया जा सकता है कि भवभूति के नाटक भारतीय रस-सिद्धांत की दृष्टि से अत्यंत प्रौढ़, दार्शनिक और मनोवैज्ञानिक गहराई के उदाहरण हैं। उन्होंने नाट्यशास्त्र में प्रतिपादित सिद्धांतों को केवल यांत्रिक रूप से ग्रहण नहीं किया, बल्कि उन्हें अपनी सृजनात्मक प्रतिभा से समृद्ध और विस्तृत किया।

*महावीरचरित* में वीर रस का नैतिक स्वरूप विशेष उल्लेखनीय है। यहाँ वीरता केवल शारीरिक पराक्रम नहीं, बल्कि धर्मपालन, वचन-निष्ठा और आदर्श-संरक्षण की चेतना है। इस प्रकार भवभूति ने वीर रस को आध्यात्मिक और नैतिक आयाम प्रदान किया।

*मालतीमाधव* में श्रृंगार रस का संयोग-वियोगात्मक स्वरूप अत्यंत सूक्ष्म मनोवैज्ञानिक धरातल पर अभिव्यक्त हुआ है। प्रेम की कोमलता, आशंका, भय, विरह और पुनर्मिलन की संवेदना—इन सभी संचारी भावों का संतुलित समन्वय स्थायी भाव को परिपक्व कर रस में परिणत करता है।

*उत्तररामचरित* भवभूति की नाट्यप्रतिभा का शिखर है। यहाँ करुण रस की निष्पत्ति राम के आत्मसंघर्ष, लोकापवाद और सीता-वियोग के माध्यम से अत्यंत मार्मिक रूप में संपन्न होती है। किंतु यह करुण अंततः निराशा में नहीं, बल्कि शान्ति और आत्मस्वीकार की दिशा में रूपांतरित होती है। इस प्रकार करुण से शान्त की ओर संक्रमण भारतीय सौंदर्यशास्त्र की परिपक्वता का द्योतक है।

अभिनवगुप्त के साधारणीकरण सिद्धांत के आलोक में यह स्पष्ट होता है कि भवभूति का नाट्य-दर्शन दर्शक को निजी अनुभव से ऊपर उठाकर सार्वजनीन भावानुभूति की ओर ले जाता है। यही कारण है कि उनके नाटक केवल ऐतिहासिक या पौराणिक आख्यान नहीं, बल्कि मानवीय संवेदना के शाश्वत दस्तावेज बन जाते हैं।

अध्ययन से निम्न निष्कर्ष विशेष रूप से उभरकर सामने आते हैं—

1. भवभूति ने रस-संरचना को मनोवैज्ञानिक गहराई प्रदान की।
2. करुण रस उनकी नाट्यदृष्टि का केंद्रीय तत्त्व है, किंतु अन्य रसों का भी संतुलित समन्वय मिलता है।



3. साधारणीकरण की प्रक्रिया उनके नाटकों में अत्यंत प्रभावपूर्ण है।
4. रस-निष्पत्ति उनके यहाँ दार्शनिक चेतना से संयुक्त है।
5. उनका नाट्य-साहित्य भारतीय सौंदर्यशास्त्र की परंपरा को उच्चतम संवेदनात्मक ऊँचाई प्रदान करता है।

अतः समग्रतः यह कहा जा सकता है कि भवभूति के नाटक भारतीय रसमीमांसा के उत्कृष्ट उदाहरण हैं। उन्होंने नाट्यशास्त्रीय सिद्धांतों को आत्मसात कर उन्हें मानवीय करुणा, प्रेम और धर्मबोध की गहन संवेदना से समृद्ध किया। इस प्रकार भवभूति भारतीय नाट्यपरंपरा में केवल एक कवि नहीं, बल्कि सौंदर्यचिंतन के दार्शनिक आचार्य के रूप में प्रतिष्ठित होते हैं।

#### संदर्भ सूची

1. भरतमुनि. *नाट्यशास्त्र*.
2. अभिनवगुप्त. *अभिनवभारती*.
3. विश्वनाथ. *साहित्यदर्पण*.
4. भवभूति. *महावीरचरित*.
5. भवभूति. *मालतीमाधव*.
6. भवभूति. *उत्तररामचरित*.
7. बलदेव उपाध्याय. *संस्कृत साहित्य का इतिहास*.
8. हजारीप्रसाद द्विवेदी. *संस्कृत साहित्य की भूमिका*.
9. पं. केशव मिश्र. *रस सिद्धांत का विकास*.
10. पं. विश्वनाथ त्रिपाठी. *भारतीय काव्यशास्त्र*.
11. ए.बी. कीथ. *Sanskrit Drama*.
12. वी. राघवन. *The Number of Rasas*.
13. काशीप्रसाद जायसवाल. *भारतीय नाट्यपरंपरा*.
14. नगेन्द्र. *भारतीय काव्यशास्त्र की भूमिका*.
15. रामचंद्र शुक्ल. *हिंदी साहित्य का इतिहास (रस पर चर्चा)*.
16. कपिलदेव द्विवेदी. *संस्कृत नाटक का इतिहास*.
17. पं. गोविंदचंद्र पांडेय. *भारतीय सौंदर्यशास्त्र*.
18. एस.के. डे. *History of Sanskrit Poetics*.
19. पं. हरिदत्त शास्त्री. *रस-मीमांसा*.
20. कृष्णचंद्र पंड्या. *नाट्यशास्त्र का अध्ययन*.

